

## भारतीय राष्ट्रवाद का उत्थान: सामाजिक एवं आर्थिक कारकों की भूमिका का ऐतिहासिक विश्लेषण

डॉ. गौतम कुमार

भूपेंद्र नारायण मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा

### सारांश

भारतीय राष्ट्रवाद का उदय आधुनिक भारतीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक प्रक्रिया थी, जिसका निर्माण केवल राजनीतिक परिस्थितियों का परिणाम नहीं था, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक तथा वैचारिक परिवर्तनों के सम्मिलित प्रभाव से हुआ। औपनिवेशिक शासन के दौरान भारतीय समाज अनेक सामाजिक कुरीतियों, आर्थिक विषमताओं और राजनीतिक दमन से प्रभावित था। ऐसे समय में आधुनिक शिक्षा, सामाजिक सुधार आंदोलनों, प्रेस एवं साहित्य, धार्मिक पुनर्जागरण तथा शिक्षित मध्यम वर्ग के उदय ने भारतीय समाज में नई चेतना का संचार किया। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य भारतीय राष्ट्रवाद के उत्थान में सामाजिक एवं आर्थिक कारकों की भूमिका का ऐतिहासिक विश्लेषण करना है तथा यह समझना है कि किस प्रकार इन कारकों ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को वैचारिक और जनाधार प्रदान किया। सामाजिक सुधार आंदोलनों ने जातिगत असमानताओं, महिला उत्पीड़न, बाल विवाह, सती प्रथा तथा अस्पृश्यता जैसी समस्याओं के विरुद्ध संघर्ष करते हुए सामाजिक पुनर्गठन का प्रयास किया। राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, ज्योतिबा फुले, स्वामी दयानन्द सरस्वती और नारायण गुरु जैसे सुधारकों ने सामाजिक चेतना एवं राष्ट्रीय एकता के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। दूसरी ओर आर्थिक कारकों में ब्रिटिश औपनिवेशिक शोषण, भूमि-राजस्व नीति, औद्योगिक अविास, विदेशी पूंजी का वर्चस्व तथा दादाभाई नौरोजी द्वारा प्रतिपादित धन-निकासी सिद्धांत ने भारतीय जनता में आर्थिक असंतोष को बढ़ाया और राष्ट्रवादी चेतना को प्रबल किया। यह अध्ययन ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है, जिसमें पुस्तकों, शोध आलेखों, अभिलेखीय दस्तावेजों तथा द्वितीयक स्रोतों का उपयोग किया गया है। अध्ययन से निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक प्रतिक्रिया नहीं था, बल्कि सामाजिक जागरण और आर्थिक शोषण के विरुद्ध उत्पन्न सामूहिक चेतना का परिणाम था, जिसने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को व्यापक सामाजिक आधार और वैचारिक दिशा प्रदान की।

**मुख्य शब्द:** - भारतीय राष्ट्रवाद, सामाजिक सुधार, आर्थिक शोषण, धन-निकासी सिद्धांत, स्वदेशी आंदोलन, औपनिवेशिक भारत, राष्ट्रीय चेतना।

### प्रस्तावना

‘राष्ट्रवाद आधुनिक विश्व इतिहास की एक महत्वपूर्ण वैचारिक एवं राजनीतिक अवधारणा है, जिसने विभिन्न देशों में राष्ट्रीय चेतना, राजनीतिक एकता तथा स्वतंत्रता आंदोलनों को दिशा प्रदान की। ‘सामान्यतः राष्ट्रवाद उस भावना को व्यक्त करता है जिसके माध्यम से किसी राष्ट्र के लोग अपनी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक तथा राजनीतिक एकता के प्रति जागरूक होते हैं और राष्ट्रीय हितों को सर्वोपरि मानते हैं। भारतीय संदर्भ में राष्ट्रवाद का उदय एक जटिल ऐतिहासिक प्रक्रिया थी, जो सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक तथा वैचारिक परिवर्तनों के सम्मिलित प्रभाव का परिणाम थी। भारत में राष्ट्रवाद केवल औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध राजनीतिक संघर्ष तक सीमित नहीं था, बल्कि यह सामाजिक जागरण, आर्थिक असंतोष और सांस्कृतिक पुनरुत्थान से भी गहराई से जुड़ा हुआ था।

‘भारत में राष्ट्रवाद के विकास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि उन्नीसवीं सदी के सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तनों में निहित थी। ब्रिटिश शासन के आगमन के साथ भारतीय समाज में अनेक परिवर्तन हुए। अंग्रेजी शिक्षा, आधुनिक संचार प्रणाली, प्रेस तथा पाश्चात्य विचारधाराओं ने भारतीय समाज में नई चेतना का विकास किया। साथ ही सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलनों ने जातिगत भेदभाव, सती प्रथा, बाल विवाह, अस्पृश्यता तथा महिला उत्पीड़न जैसी समस्याओं के विरुद्ध आवाज उठाई। इन सुधारों ने भारतीय समाज में समानता, आधुनिकता और राष्ट्रीय चेतना के विकास को प्रोत्साहित किया।

औपनिवेशिक शासन की आर्थिक नीतियों ने भारतीय समाज में व्यापक असंतोष को जन्म दिया। भूमि-राजस्व की कठोर व्यवस्था, औद्योगिक अविास, विदेशी पूंजी का प्रभुत्व, धन-निकासी तथा भारतीय उद्योगों के पतन ने आर्थिक संकट को गहरा किया। राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों ने इन समस्याओं को औपनिवेशिक शोषण का परिणाम बताते हुए भारतीय जनता को संगठित करने का प्रयास किया। फलस्वरूप आर्थिक शोषण के विरुद्ध संघर्ष राष्ट्रवाद का एक प्रमुख आधार बन गया।

### **साहित्य समीक्षा**

भारतीय राष्ट्रवाद के उदय, उसके सामाजिक आधार तथा आर्थिक कारकों की भूमिका पर अनेक इतिहासकारों, समाजशास्त्रियों और अर्थशास्त्रियों ने महत्वपूर्ण अध्ययन प्रस्तुत किए हैं। भारतीय राष्ट्रवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझने के लिए बिपिन चंद्र, सुमित सरकार, ए. आर. देसाई, आर. सी. दत्त, दादाभाई नौरोजी तथा शेखर बंधोपाध्याय जैसे विद्वानों के कार्य अत्यंत उपयोगी माने जाते हैं। इन अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि भारतीय राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक संघर्ष का परिणाम नहीं था, बल्कि यह सामाजिक जागरण, आर्थिक असंतोष तथा वैचारिक परिवर्तन की संयुक्त प्रक्रिया थी।

बिपिन चंद्र ने भारतीय राष्ट्रवाद को औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध विकसित एक ऐतिहासिक चेतना के रूप में देखा है। उनके अनुसार ब्रिटिश आर्थिक शोषण, आधुनिक शिक्षा, प्रेस और राजनीतिक संगठनों ने राष्ट्रीय चेतना के विकास में केंद्रीय भूमिका निभाई। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन एक व्यापक जनआंदोलन था, जिसमें किसानों, मजदूरों, विद्यार्थियों तथा मध्यम वर्ग की भागीदारी ने राष्ट्रवाद को मजबूत आधार प्रदान किया।

सुमित सरकार ने भारतीय राष्ट्रवाद के विकास को सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों से जोड़ते हुए विश्लेषित किया है। उनके अनुसार उन्नीसवीं और बीसवीं सदी में उत्पन्न आर्थिक संकट, सामाजिक परिवर्तन तथा राजनीतिक चेतना ने राष्ट्रवादी आंदोलन को व्यापक स्वरूप प्रदान किया। वे विशेष रूप से जनभागीदारी, वर्गीय संबंधों और सामाजिक बदलावों को राष्ट्रवाद के विकास से जोड़ते हैं।

ए. आर. देसाई ने भारतीय राष्ट्रवाद के सामाजिक आधार पर बल देते हुए यह प्रतिपादित किया कि आधुनिक शिक्षा, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण और शिक्षित मध्यम वर्ग के विकास ने राष्ट्रवादी चेतना को जन्म दिया। उनके अध्ययन में यह स्पष्ट किया गया है कि सामाजिक परिवर्तन और वर्गीय संरचना ने राष्ट्रवाद के विस्तार में निर्णायक भूमिका निभाई।

दादाभाई नौरोजी तथा आर. सी. दत्त ने औपनिवेशिक आर्थिक नीतियों की आलोचना करते हुए भारतीय गरीबी और आर्थिक शोषण को राष्ट्रवाद के विकास का प्रमुख कारण बताया। नौरोजी के धन-निकासी सिद्धांत (Drain Theory) ने यह स्पष्ट किया कि भारत की आर्थिक संपदा व्यवस्थित रूप से ब्रिटेन भेजी जा रही थी, जिससे आर्थिक असंतोष और

राष्ट्रवादी भावना को बल मिला।

### राष्ट्रवाद की अवधारणा

राष्ट्रवाद आधुनिक युग की एक महत्वपूर्ण वैचारिक, सामाजिक और राजनीतिक अवधारणा है, जिसने विश्व के अनेक देशों में राष्ट्रीय चेतना, राजनीतिक एकता और स्वतंत्रता आंदोलनों को जन्म दिया। सामान्य अर्थ में राष्ट्रवाद उस भावना को कहा जाता है जिसके अंतर्गत किसी राष्ट्र के लोग अपनी सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, भाषाई, सामाजिक तथा राजनीतिक एकता के प्रति गहरा लगाव रखते हैं तथा राष्ट्र के हितों को सर्वोच्च मानते हैं। यह केवल राजनीतिक सत्ता प्राप्ति का विचार नहीं, बल्कि राष्ट्रीय पहचान, आत्मसम्मान, सामूहिक चेतना और साझा हितों की भावना से जुड़ा हुआ सिद्धांत है।

राष्ट्रवाद का अर्थ विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने दृष्टिकोण से स्पष्ट किया है। कुछ विद्वानों के अनुसार राष्ट्रवाद एक ऐसी चेतना है जो समान इतिहास, भाषा, संस्कृति और राजनीतिक आकांक्षाओं के आधार पर लोगों को संगठित करती है। राजनीतिक दृष्टि से राष्ट्रवाद को स्वशासन, राष्ट्रीय संप्रभुता और स्वतंत्रता प्राप्ति की आकांक्षा के रूप में देखा जाता है। सामाजिक दृष्टिकोण से यह समाज में एकता, समानता और सामूहिक पहचान के विकास को प्रोत्साहित करता है, जबकि आर्थिक दृष्टि से राष्ट्रवाद आर्थिक आत्मनिर्भरता और राष्ट्रीय संसाधनों पर नियंत्रण की भावना को मजबूत करता है।

राष्ट्रवाद के प्रमुख सिद्धांतों में राजनीतिक राष्ट्रवाद, सांस्कृतिक राष्ट्रवाद, आर्थिक राष्ट्रवाद तथा नागरिक राष्ट्रवाद प्रमुख हैं। राजनीतिक राष्ट्रवाद राज्य की स्वतंत्रता और राजनीतिक अधिकारों पर बल देता है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद भाषा, धर्म, परंपरा और सांस्कृतिक विरासत को राष्ट्रीय पहचान का आधार मानता है। आर्थिक राष्ट्रवाद राष्ट्रीय उद्योगों, स्वदेशी उत्पादन और आर्थिक आत्मनिर्भरता पर बल देता है, जबकि नागरिक राष्ट्रवाद समान नागरिकता, संवैधानिक अधिकारों और लोकतांत्रिक मूल्यों को महत्व देता है। इन सिद्धांतों ने विभिन्न देशों में राष्ट्रवाद के विकास को अलग-अलग रूपों में प्रभावित किया।

भारतीय राष्ट्रवाद की विशेषता यह थी कि इसका स्वरूप बहुआयामी, समावेशी और औपनिवेशिक शासन-विरोधी था। भारत जैसे विविधताओं वाले समाज में राष्ट्रवाद किसी एक भाषा, धर्म या जाति पर आधारित नहीं था। बल्कि यह साझा राजनीतिक अनुभव, औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध संघर्ष और राष्ट्रीय एकता की भावना से विकसित हुआ। भारतीय राष्ट्रवाद में सामाजिक सुधार आंदोलनों, धार्मिक पुनर्जागरण, आधुनिक शिक्षा, प्रेस, आर्थिक शोषण के विरुद्ध असंतोष तथा राष्ट्रीय आंदोलन की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। इसकी एक प्रमुख विशेषता यह भी थी कि इसने सामाजिक समानता, धार्मिक सहिष्णुता और जनभागीदारी को प्रोत्साहित किया।

यूरोपीय और भारतीय राष्ट्रवाद के बीच महत्वपूर्ण अंतर भी देखने को मिलते हैं। यूरोप में राष्ट्रवाद मुख्यतः औद्योगिक क्रांति, राजनीतिक क्रांतियों, भाषाई एकता तथा क्षेत्रीय राज्य निर्माण की प्रक्रिया से विकसित हुआ। वहाँ राष्ट्रवाद का स्वरूप कई बार आक्रामक और विस्तारवादी भी रहा। इसके विपरीत भारतीय राष्ट्रवाद का विकास औपनिवेशिक दमन और आर्थिक शोषण के विरुद्ध संघर्ष की पृष्ठभूमि में हुआ। भारतीय राष्ट्रवाद अपेक्षाकृत

### भारतीय राष्ट्रवाद का उत्थान

भारतीय राष्ट्रवाद का उत्थान उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध और बीसवीं सदी के प्रारंभ में एक दीर्घकालिक ऐतिहासिक

प्रक्रिया के रूप में विकसित हुआ। यह केवल औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध राजनीतिक प्रतिक्रिया नहीं था, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक और वैचारिक परिवर्तनों के संयुक्त प्रभाव का परिणाम था। ब्रिटिश शासन की नीतियों, आधुनिक शिक्षा, संचार साधनों, सामाजिक सुधार आंदोलनों तथा राष्ट्रीय संगठनों के उदय ने भारतीय समाज में राष्ट्रीय चेतना के विकास को गति प्रदान की। राष्ट्रवाद का विकास धीरे-धीरे स्थानीय और क्षेत्रीय पहचानों से आगे बढ़कर राष्ट्रीय एकता और स्वतंत्रता की भावना में परिवर्तित हुआ।

**1857 के विद्रोह का प्रभाव** “भारतीय राष्ट्रवाद के प्रारंभिक विकास में 1857 का विद्रोह एक महत्वपूर्ण घटना थी। यद्यपि इसे विभिन्न इतिहासकारों ने सैनिक विद्रोह, किसान विद्रोह अथवा प्रथम स्वतंत्रता संग्राम के रूप में व्याख्यायित किया है, तथापि इस घटना ने भारतीय जनता में विदेशी शासन के विरुद्ध व्यापक असंतोष को उजागर किया। इस विद्रोह में सैनिकों, किसानों, जमींदारों तथा स्थानीय शासकों की भागीदारी ने यह संकेत दिया कि औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध प्रतिरोध की भावना समाज के विभिन्न वर्गों में विद्यमान थी। 1857 की असफलता के बावजूद इसने भविष्य के राष्ट्रवादी आंदोलन के लिए मानसिक और राजनीतिक आधार तैयार किया तथा राष्ट्रीय एकता की भावना को प्रोत्साहित किया।

### अंग्रेजी शिक्षा और आधुनिक चेतना

भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में अंग्रेजी शिक्षा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार से भारतीयों को आधुनिक राजनीतिक विचारों, स्वतंत्रता, समानता, लोकतंत्र, संवैधानिक शासन तथा राष्ट्रवाद जैसी अवधारणाओं की जानकारी प्राप्त हुई। पाश्चात्य शिक्षा ने तार्किकता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और आधुनिक बौद्धिक चेतना को बढ़ावा दिया। इसके परिणामस्वरूप एक शिक्षित मध्यम वर्ग का उदय हुआ, जिसने ब्रिटिश शासन की नीतियों की आलोचना की तथा राष्ट्रीय हितों की रक्षा के लिए संगठित प्रयास आरंभ किए। इसी वर्ग ने आगे चलकर राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व किया।

### प्रेस, साहित्य और जनमत निर्माण

प्रेस और साहित्य ने भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में जनमत निर्माण का प्रभावी माध्यम प्रदान किया। समाचार पत्रों, पत्रिकाओं और साहित्यिक कृतियों ने औपनिवेशिक नीतियों की आलोचना करते हुए जनता में राजनीतिक जागरूकता फैलाने का कार्य किया। भारतीय भाषाओं तथा अंग्रेजी में प्रकाशित समाचार पत्रों ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समस्याओं को जनता के सामने रखा तथा राष्ट्रीय एकता की भावना को मजबूत किया। राष्ट्रवादी साहित्य ने गौरवशाली अतीत, सांस्कृतिक चेतना और स्वतंत्रता की आकांक्षा को बल दिया। इस प्रकार प्रेस और साहित्य राष्ट्रवादी विचारों के प्रसार के प्रमुख साधन बने।

### सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलनों की भूमिका

उन्नीसवीं सदी के सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलनों ने भारतीय समाज में नई चेतना उत्पन्न की। सामाजिक सुधारकों ने सती प्रथा, बाल विवाह, अस्पृश्यता, जातिगत भेदभाव और महिला उत्पीड़न जैसी कुरीतियों के विरुद्ध संघर्ष किया। राजा राममोहन राय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, स्वामी दयानन्द सरस्वती, ज्योतिबा फुले तथा अन्य सुधारकों ने सामाजिक समानता, शिक्षा और आधुनिक मूल्यों को प्रोत्साहित किया। इन आंदोलनों ने समाज में तार्किकता, आत्मसम्मान और सामाजिक एकता की भावना को मजबूत किया, जिसने राष्ट्रवाद के लिए आवश्यक सामाजिक आधार तैयार किया।

## भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना और राष्ट्रवाद का विकास

1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम थी। कांग्रेस ने विभिन्न क्षेत्रों, भाषाओं और समुदायों के लोगों को एक साझा राजनीतिक मंच प्रदान किया। प्रारंभिक वर्षों में कांग्रेस ने संवैधानिक सुधारों, प्रशासनिक न्याय तथा भारतीयों की राजनीतिक भागीदारी की मांग की। धीरे-धीरे यह संगठन राष्ट्रवादी आंदोलन का प्रमुख केंद्र बन गया और स्वशासन तथा स्वतंत्रता की मांग को व्यापक जनसमर्थन प्राप्त हुआ। कांग्रेस ने राजनीतिक संवाद, जनजागरण और राष्ट्रीय एकता को प्रोत्साहित कर भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में केंद्रीय भूमिका निभाई।

### राष्ट्रवाद का सामाजिक आधार

भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में सामाजिक कारकों की अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका रही। अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी का भारतीय समाज अनेक सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक रूढ़ियों तथा जातिगत विभाजनों से ग्रस्त था। सती प्रथा, बाल विवाह, बहुविवाह, विधवा-विरोध, अस्पृश्यता तथा कठोर जाति व्यवस्था जैसी समस्याओं ने भारतीय समाज को जकड़ रखा था। ऐसी परिस्थितियों में आधुनिक शिक्षा, पश्चिमी ज्ञान और यूरोपीय पुनर्जागरण के विचारों ने भारतीय समाज में नई चेतना का संचार किया। इससे सामाजिक सुधार आंदोलनों का विकास हुआ, जिसने राष्ट्रवाद के लिए एक मजबूत सामाजिक आधार तैयार किया।

सामाजिक सुधारकों ने भारतीय समाज की जड़ता को तोड़ने और आधुनिक मूल्यों को स्थापित करने का प्रयास किया। प्रारंभिक सुधारकों ने यह समझा कि भारतीय समाज धर्म से गहराई से जुड़ा हुआ है, इसलिए सामाजिक सुधारों को स्वीकार्य बनाने के लिए धार्मिक ग्रंथों और परंपराओं की नई व्याख्या की गई। इस संदर्भ में राजा राममोहन राय ने सती प्रथा का विरोध करते हुए यह तर्क दिया कि प्राचीन धार्मिक ग्रंथ सती प्रथा का समर्थन नहीं करते। इसी प्रकार ईश्वर चंद्र विद्यासागर ने विधवा विवाह के समर्थन में शास्त्रीय प्रमाण प्रस्तुत किए, जबकि स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जाति-आधारित भेदभाव का विरोध करते हुए वैदिक मूल्यों की पुनर्व्याख्या की।

कुछ सुधारकों ने सामाजिक सुधारों को धार्मिक औचित्य से अलग रखकर भी आगे बढ़ाने का प्रयास किया। उदाहरणस्वरूप अक्षय कुमार दत्त ने बाल विवाह और बहुविवाह का विरोध करते हुए तार्किकता और सामाजिक उपयोगिता पर बल दिया। इससे यह स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज में आधुनिक चेतना केवल धार्मिक सुधार तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने सामाजिक पुनर्गठन की व्यापक प्रक्रिया को जन्म दिया। 'जाति प्रथा को राष्ट्रवाद के विकास में एक प्रमुख बाधा माना गया। समाज सुधारक ज्योतिबा फुले तथा नारायण गुरु ने जातिगत भेदभाव का तीव्र विरोध किया और सामाजिक समानता पर बल दिया। नारायण गुरु ने "एक जाति, एक धर्म और एक ईश्वर" का संदेश देकर सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा दिया। इस प्रकार सामाजिक सुधार आंदोलनों ने भारतीय समाज को व्यापक स्तर पर संगठित करने और राष्ट्रवादी चेतना को विकसित करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

महिलाओं की स्थिति में सुधार को भी राष्ट्र निर्माण का आवश्यक तत्व माना गया। महिला शिक्षा, विधवा विवाह, बाल विवाह निषेध और सामाजिक समानता की वकालत करते हुए सुधारकों ने महिलाओं की भागीदारी को बढ़ावा दिया। यह विचार व्यापक रूप से स्वीकार किया गया कि जिस समाज में महिलाएँ उपेक्षित रहती हैं, वह समाज प्रगति नहीं कर सकता। फलतः महिलाओं की भागीदारी ने राष्ट्रवादी आंदोलन को सामाजिक रूप से अधिक व्यापक स्वरूप प्रदान किया।

### राष्ट्रवाद का आर्थिक आधार

भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में आर्थिक कारकों की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण रही। प्रारंभिक चरण में भारतीय बुद्धिजीवी ब्रिटिश शासन को आधुनिकता और विकास का माध्यम मानते थे। उनका विश्वास था कि ब्रिटिश शासन भारत में प्रशासनिक सुधार, औद्योगिक विकास तथा आधुनिक शिक्षा को प्रोत्साहित करेगा। किंतु उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में यह धारणा कमजोर पड़ने लगी जब भारतीय बुद्धिजीवियों ने ब्रिटिश शासन की आर्थिक नीतियों के वास्तविक स्वरूप का विश्लेषण करना प्रारंभ किया।

दादाभाई नौरोजी, महादेव गोविंद रानाडे तथा आर. सी. दत्त जैसे राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों ने औपनिवेशिक आर्थिक शोषण की प्रकृति को उजागर किया। इनके अनुसार ब्रिटिश शासन ने भारत को कच्चे माल के आपूर्तिकर्ता और ब्रिटिश निर्मित वस्तुओं के उपभोक्ता के रूप में परिवर्तित कर दिया था। इस प्रक्रिया में भारत की पारंपरिक अर्थव्यवस्था कमजोर हुई और व्यापक निर्धनता का प्रसार हुआ।

दादाभाई नौरोजी ने अपने प्रसिद्ध “धन-निकासी सिद्धांत” (Drain Theory) के माध्यम से बताया कि भारत की संपत्ति निरंतर ब्रिटेन भेजी जा रही थी। उन्होंने तर्क दिया कि ब्रिटिश अधिकारियों के वेतन एवं पेंशन, विदेशी पूंजी पर लाभ, सरकारी ऋणों के ब्याज और प्रशासनिक व्यय के माध्यम से भारतीय संसाधनों का व्यापक निष्कासन हो रहा था। नौरोजी ने बार-बार इस बात पर बल दिया कि भारत की गरीबी प्राकृतिक नहीं बल्कि मानव-निर्मित समस्या है।

आर. सी. दत्त ने भी भारतीय गरीबी के पीछे औपनिवेशिक आर्थिक नीतियों को उत्तरदायी ठहराया। भूमि-राजस्व की कठोर व्यवस्था, कृषि पर अत्यधिक निर्भरता तथा औद्योगिक विकास की कमी ने भारतीय समाज को आर्थिक संकट की स्थिति में पहुँचा दिया। न्यायमूर्ति रानाडे ने आर्थिक विकास के लिए स्वदेशी उद्योगों और भारतीय पूंजी आधारित औद्योगीकरण पर बल दिया तथा विदेशी पूंजी पर निर्भरता का विरोध किया।

स्वदेशी आंदोलन ने आर्थिक राष्ट्रवाद को नई दिशा प्रदान की। विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग ने राष्ट्रीय चेतना को आर्थिक स्वरूप दिया। इससे यह विचार विकसित हुआ कि आर्थिक आत्मनिर्भरता राष्ट्रीय स्वतंत्रता की आधारशिला है।

### भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में सामाजिक एवं आर्थिक कारकों की भूमिका

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन केवल राजनीतिक नेतृत्व तक सीमित संघर्ष नहीं था, बल्कि यह सामाजिक जागरण, आर्थिक असंतोष तथा जनसहभागिता पर आधारित एक व्यापक राष्ट्रीय आंदोलन था। सामाजिक और आर्थिक कारकों ने भारतीय राष्ट्रवाद को जनाधार प्रदान किया तथा विभिन्न वर्गों को औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध एक साझा मंच पर संगठित किया। किसानों, मजदूरों, महिलाओं, विद्यार्थियों, शिक्षित मध्यम वर्ग तथा व्यापारिक समुदाय की भागीदारी ने राष्ट्रीय आंदोलन को व्यापक स्वरूप प्रदान किया। साथ ही औपनिवेशिक आर्थिक शोषण, भूमि-राजस्व नीतियाँ, बेरोजगारी, गरीबी और उद्योगों के पतन ने जनता में असंतोष को जन्म दिया, जिसने राष्ट्रवादी चेतना को और अधिक सशक्त बनाया।

### असहयोग आंदोलन में जनभागीदारी

1920-22 का असहयोग आंदोलन भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ था। इस आंदोलन ने पहली बार राष्ट्रवाद को व्यापक जनाधार प्रदान किया। महात्मा गांधी के नेतृत्व में आरंभ हुए इस आंदोलन में

विद्यार्थियों, शिक्षकों, किसानों, व्यापारियों, महिलाओं और श्रमिक वर्ग ने सक्रिय भागीदारी की। विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार, सरकारी विद्यालयों और न्यायालयों के बहिष्कार तथा स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग ने राष्ट्रीय चेतना को सामाजिक स्तर पर मजबूत किया। किसानों ने करों और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई, जबकि शिक्षित मध्यम वर्ग ने संगठनात्मक नेतृत्व प्रदान किया। इस आंदोलन ने यह सिद्ध किया कि सामाजिक आधारों के बिना राष्ट्रवादी आंदोलन व्यापक रूप ग्रहण नहीं कर सकता।

### **सविनय अवज्ञा आंदोलन और आर्थिक असंतोष**

1930-34 का सविनय अवज्ञा आंदोलन आर्थिक कारकों से गहराई से जुड़ा हुआ था। नमक कानून का उल्लंघन केवल प्रतीकात्मक विरोध नहीं था, बल्कि यह औपनिवेशिक आर्थिक नियंत्रण के विरुद्ध प्रतिरोध का प्रतीक था। ब्रिटिश शासन की कर नीतियों, भूमि-राजस्व व्यवस्था तथा आर्थिक शोषण के कारण किसानों और आम जनता में असंतोष बढ़ रहा था। वैश्विक आर्थिक मंदी ने भी भारतीय समाज को प्रभावित किया, जिससे किसानों और व्यापारियों की आर्थिक स्थिति कमजोर हुई। परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में किसानों, मजदूरों और व्यापारिक वर्ग ने आंदोलन में भाग लिया। इस आंदोलन ने आर्थिक समस्याओं को राष्ट्रीय मुद्दों से जोड़कर राष्ट्रवादी चेतना को और अधिक व्यापक बनाया।

### **भारत छोड़ो आंदोलन में सामाजिक वर्गों की भागीदारी**

1942 का भारत छोड़ो आंदोलन भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का सबसे व्यापक जनआंदोलन माना जाता है। इस आंदोलन में समाज के लगभग सभी वर्गों की भागीदारी देखने को मिली। विद्यार्थियों, महिलाओं, किसानों, मजदूरों और स्थानीय नेतृत्व ने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध प्रत्यक्ष संघर्ष किया। अनेक क्षेत्रों में जनता ने स्वतःस्फूर्त आंदोलनों का नेतृत्व किया तथा प्रशासनिक ढाँचों को चुनौती दी। इस आंदोलन ने यह स्पष्ट किया कि राष्ट्रवादी चेतना अब केवल शिक्षित वर्ग तक सीमित नहीं रही, बल्कि ग्रामीण और शहरी समाज के व्यापक वर्गों तक पहुँच चुकी थी।

### **राष्ट्रवादी चेतना के विस्तार में सामाजिक एवं आर्थिक कारकों का योगदान**

भारतीय राष्ट्रवाद के विस्तार में सामाजिक एवं आर्थिक कारकों की निर्णायक भूमिका रही। सामाजिक सुधार आंदोलनों ने जातिगत असमानता, महिला उत्पीड़न और सामाजिक विभाजनों को चुनौती देकर राष्ट्रीय एकता की भावना को प्रोत्साहित किया। आधुनिक शिक्षा, प्रेस तथा जनसंचार माध्यमों ने लोगों में राजनीतिक जागरूकता और राष्ट्रीय चेतना का विकास किया। दूसरी ओर आर्थिक शोषण, भूमि-राजस्व की कठोर नीतियाँ, उद्योगों का पतन, गरीबी और बेरोजगारी ने विभिन्न सामाजिक वर्गों को ब्रिटिश शासन के विरुद्ध संगठित होने के लिए प्रेरित किया। स्वदेशी और आर्थिक आत्मनिर्भरता की भावना ने राष्ट्रवाद को जनसामान्य से जोड़ने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

इस प्रकार भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में सामाजिक एवं आर्थिक कारक राष्ट्रवाद के विकास के मूल आधार सिद्ध हुए। इन कारकों ने भारतीय समाज के विभिन्न वर्गों को एक साझा राष्ट्रीय उद्देश्य से जोड़ते हुए स्वतंत्रता आंदोलन को व्यापक जनआंदोलन का स्वरूप प्रदान किया तथा भारतीय राष्ट्रवाद को मजबूत और स्थायी आधार दिया।

### **निष्कर्ष**

भारतीय राष्ट्रवाद का उत्थान आधुनिक भारतीय इतिहास की एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया थी, जिसका विकास केवल राजनीतिक परिस्थितियों का परिणाम नहीं था, बल्कि सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक तथा वैचारिक परिवर्तनों के

संयुक्त प्रभाव से संभव हुआ। प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय राष्ट्रवाद का निर्माण क्रमिक रूप से हुआ, जिसमें सामाजिक सुधार आंदोलनों, आधुनिक शिक्षा, प्रेस, आर्थिक असंतोष तथा औपनिवेशिक शोषण के विरुद्ध विकसित चेतना ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय राष्ट्रवाद ने समाज के विभिन्न वर्गों को एक साझा राष्ट्रीय उद्देश्य से जोड़ते हुए स्वतंत्रता आंदोलन को व्यापक जनाधार प्रदान किया।

सामाजिक कारकों ने राष्ट्रवाद के विकास के लिए आवश्यक सामाजिक आधार तैयार किया। सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलनों ने जातिगत असमानता, सती प्रथा, बाल विवाह, अस्पृश्यता और महिला उत्पीड़न जैसी कुरीतियों के विरुद्ध संघर्ष कर भारतीय समाज में नई चेतना उत्पन्न की। आधुनिक शिक्षा और प्रेस ने तार्किक सोच, राजनीतिक जागरूकता तथा राष्ट्रीय एकता की भावना को प्रोत्साहित किया। शिक्षित मध्यम वर्ग, महिलाओं, विद्यार्थियों, किसानों तथा मजदूरों की बढ़ती भागीदारी ने राष्ट्रवाद को केवल अभिजात वर्ग की अवधारणा न रहने देकर जनसामान्य के आंदोलन में परिवर्तित कर दिया।

औपनिवेशिक आर्थिक नीतियों ने भारतीय राष्ट्रवाद को मजबूत आधार प्रदान किया। भूमि-राजस्व की कठोर व्यवस्था, उद्योगों का पतन, आर्थिक असमानता, गरीबी तथा विदेशी पूंजी के वर्चस्व ने भारतीय समाज में व्यापक असंतोष को जन्म दिया। दादाभाई नौरोजी, महादेव गोविंद रानाडे और आर. सी. दत्त जैसे राष्ट्रवादी अर्थशास्त्रियों ने ब्रिटिश आर्थिक शोषण की प्रकृति को उजागर करते हुए धन-निकासी सिद्धांत के माध्यम से भारतीय जनता को जागरूक किया। आर्थिक समस्याओं को राष्ट्रीय प्रश्न के रूप में प्रस्तुत करने से विभिन्न क्षेत्रों, जातियों और वर्गों के लोगों में साझा राष्ट्रीय हित की भावना विकसित हुई।

भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन के विभिन्न चरणों—असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन तथा भारत छोड़ो आंदोलन—में सामाजिक एवं आर्थिक कारकों की निर्णायक भूमिका स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। इन आंदोलनों में किसानों, मजदूरों, विद्यार्थियों, महिलाओं तथा मध्यम वर्ग की व्यापक भागीदारी ने राष्ट्रवाद को जनआंदोलन का स्वरूप प्रदान किया। आर्थिक शोषण के विरुद्ध संघर्ष और सामाजिक जागरण ने स्वतंत्रता की मांग को नैतिक, वैचारिक और जनसामाजिक आधार प्रदान किया।

अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भारतीय राष्ट्रवाद केवल राजनीतिक स्वतंत्रता की आकांक्षा तक सीमित नहीं था, बल्कि यह सामाजिक पुनर्गठन, आर्थिक न्याय और राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता की व्यापक चेतना का परिणाम था। सामाजिक एवं आर्थिक कारकों ने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को न केवल दिशा प्रदान की, बल्कि उसे व्यापक जनसमर्थन और स्थायित्व भी दिया। इस प्रकार भारतीय राष्ट्रवाद का इतिहास सामाजिक जागरण, आर्थिक प्रतिरोध और राष्ट्रीय एकता की एक संयुक्त ऐतिहासिक प्रक्रिया के रूप में समझा जा सकता है।

### आभारोक्ति

लेखक इस शोध आलेख को तैयार करने में सहयोग देने वाले सभी शिक्षकों, विद्वानों, पुस्तकालयों तथा उपलब्ध अध्ययन सामग्री के प्रति धन्यवाद व्यक्त करता है। साथ ही उन लेखकों और शोधकर्ताओं के प्रति भी आभार प्रकट करता है, जिनकी पुस्तकों और शोध कार्यों से इस अध्ययन को समझने और पूरा करने में सहायता मिली।

### संदर्भसूची

1. चंद्र, बिपिन. भारत का स्वतंत्रता संघर्ष. नई दिल्ली: हिंदी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, 2016, पृ. 15-

- 40, 85-120|
2. चंद्र, बिपिन. आधुनिक भारत का इतिहास. नई दिल्ली: ओरिएंट ब्लैकस्वान, 2019, पृ. 102-156|
  3. सरकार, सुमित. आधुनिक भारत (1885-1947). नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2018, पृ. 25-70, 110-158|
  4. ताराचंद. भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, खंड-1. नई दिल्ली: प्रकाशन विभाग, पृ. 55-112|
  5. ताराचंद. भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास, खंड-2. नई दिल्ली: प्रकाशन विभाग, पृ. 140-210|
  6. मजूमदार, आर. सी. History of the Freedom Movement in India, Vol. I. कोलकाता: Firma KLM, 1963, पृ. 89-146|
  7. नौरोजी, दादाभाई. Poverty and Un-British Rule in India. नई दिल्ली: Commonwealth Publishers, 1988, पृ. 201-260, 320-345|
  8. दत्त, आर. सी. Economic History of India. नई दिल्ली: Publications Division, पुनर्मुद्रित संस्करण, पृ. 75-135, 210-245|
  9. देसाई, ए. आर. Social Background of Indian Nationalism. मुंबई: Popular Prakashan, 2005, पृ. 45-97, 130-178|
  10. बंघोपाध्याय, शेखर. From Plassey to Partition and After: A History of Modern India. नई दिल्ली: Orient BlackSwan, 2015, पृ. 180-240|
  11. शर्मा, रामविलास. भारतीय नवजागरण और यूरोप. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, पृ. 58-102|
  12. चंद्र, बिपिन. Nationalism and Colonialism in Modern India. नई दिल्ली: Orient Longman, 1981, पृ. 65-118|
  13. रानाडे, महादेव गोविंद. Essays on Indian Economics. नई दिल्ली: Publications Division, पृ. 44-86|
  14. विद्यासागर, ईश्वरचंद्र. समाज सुधार संबंधी निबंध. कोलकाता: क्लासिक संस्करण, पृ. 22-56|
  15. फुले, ज्योतिबा. गुलामगिरी. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, पृ. 40-78|
  16. The Hindu, Amrita Bazar Patrika, Kesari, Young India, Harijan आदि समाचार-पत्र एवं समकालीन पत्रिकाएँ।
  17. National Archives of India, New Delhi. औपनिवेशिक प्रशासनिक अभिलेख।